जीवन के समस्त पहलूओं में इस्लामी शरीअ़त को

निर्णायक एवं न्यायाध्यक्ष मानने की अनिवार्यता से संबंधित

पवित्र कुरान से साठ प्रमाण एवं शासन के सत्य अर्थ का व्याख्या

संपादनः

माजिद बिन सोलेमान अर्रसी

الترجمة الهندية لكتاب: **ستون دليلا قرآنيا على وجوب التحاكم إلى شريعة الإسلام في جميع شئون الحياة،**

وتوضيح المعنى الصحيح لمصطلح الحاكمية لفضيلة الشيخ ماجد بن سليمان الرسي/ حفظه الله

पुस्तक का विवरण

पुस्तक का नाम: **जीवन के समस्त पहलूओं में इस्तेमाली शरीअ़त को निर्णायक एवं न्यायाध्यझ मानने की अनिवार्यता से संबंधित पवित्र क़ुरआन से साठ प्रमाण एवं शासन के सत्य अर्थ का व्याख्या**

लेखक: **शैख माजिद बिन सोलेमान अर्रसी**

अनुवाद: फैजुर रह़मान ह़िफजुर रह़मान तैमी

प्रकाशन वर्ष: 1442 हिजरी – 2021 इसवी

ईमेल: binhifzurrahman@gmail.com

الكتاب منشور في موقع صيد الفوائد و إسلام هاوس

https://islamhouse.com/hi/main/

http://www.saaid.net/book/list.php?cat=92

बिस्मिल्लाहिर्रह़मानिर्रह़ीम

प्राक्कथन:

الحمد لله رب العالمين، والصلاة والسلام على أشرف الأنبياء والمرسلين، نبينا محمد، وعلى آله وصحبه أجمعين، أما بعد:

अल्लाह तआ़ला के अवतरित शरीअ़त(धर्म)को न्यायाधीश एवं न्यायाध्यक्ष मानना और उसके अनुसार न्याय करना धर्म के सिद्धांत एवं इस्लाम के आधार का भाग है।धर्म के इस नियम एवं सिद्धांत पर अ़मल करने वाला ही वास्तव में मख़लूक(जीवों)के प्रति अल्लाह तआ़ला की रोबूबियत(अल्लाह होने)एवं उसके पूर्ण संपत्ति एवं पूर्ण नियंत्रण के तकाज़ा को पूरा करने वाला है,क्योंकि जिस प्रकार अल्लाह तआ़ला के अतिरिक्त कोई रचनाकार नहीं है उसी प्रकार अल्लाह तआ़ला के अतिरिक्त कोई निर्णय लेने वाला नहीं जिसका निर्णय समय का सिक्का हो।अल्लाह तआ़ला का कथन है:(ألا له الخلق **والأمر**) (याद रखो अल्लाह ही के लिए विशेष है रचनाकार होना एवं न्यायाध्यक्ष होना)इसके अतिरिक्त अल्लाह तआ़ला नीति वाला एवं बुद्धिमान है,वह अपने मखलूक़(जीवों)के लाभों से र्स्वाधिक अवगत है,उनपर कृपा करने वाला और उनके सौभाग्य एवं मुक्ति के समस्त मार्गों एवं माध्यमों का ज्ञान रखने वाला है।

इतिहास इस बात पर साक्षी है कि संसार के वे समस्त छेत्र एवं देश जहां इस्लामी शरीअ़त(धर्म)लागू होती है,वहां के मुसलमान एवं गैर मुसलिम सब शताब्दियों से शांति व खुशहाली एवं सामाजिक न्याय के उपहार से लाभार्थी हो रहे हैं एवं यह आशीर्वाद अब तक जारी है।इसके विपरीत वे देश जहां मनुष्यों के बनाऐ हुऐ नियम एवं सिधांत लागू होता है वहां अमन व शांति एवं न्याय के बजाए अपराध दर बढ़ा हुआ है,सांसारिक गणना के माध्यम से इन वासतविकताओं की पुष्टि की जा सकती है।

अल्लाह तआ़ला के अवतरित शरीअ़त(धर्म)ही अल्लाह के बंदों के लिए न्यायाधिपति है,इस संबंध से पैगंबर सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम से ही मुसलमानों के मध्य कोई विरोध नहीं पाया जाता है और न इस विषय पर तर्क-वितर्क की कभी आवश्यकता हुई है।यह सत्य है कि मुस्लिम समाज

में इस्लामी शरीअ़त(धर्म)के लागू होने के पश्चात भी अत्याचार,कमी कोताही एवं मुद्रास्फीति एवं अपस्फीति के कुछ घटनाऐं सामने आए हैं किंतु मुसलमानों की समान व्यवहार यही है कि जीवन के समस्त भागों में इस्लामी धर्म लागू हो।शताबदियों तक यही स्थिति रही है,फिर ईसाइयों के धर्मयुद्धों का काल आया एवं मुसलमान सम्मान एवं प्रतिष्ठा के रूप से दुर्बल होगए।उसके पश्चात जब शासित देश औपनिवेशिक शक्तियों के चंगुल से स्वतंत्र हुए तो इस्लाम एवं मुसलमानों से कुछ शत्रुता रखने वाले इन औपनिवेशिक शक्तियों ने अपने पश्चात ऐसे दुमछिलों एवं **फट्टूओं** को लगा दिया जो थे तो मुसलमान किंतु उनकी शिक्षा एवं प्रशिक्षण पच्छमी शैक्षणिक संस्थानों में हुई थी और वे पच्छमियों के विचारधारा से प्रभावित थे।जब मुसलमानों की इस पश्चिमीकृत संतान ने शासन संभाला तो इन ही प्च्छमियों के नियम एवं कानून को अपने प्रशासित देशों में लागू किया।

मामला यहीं नहीं थमा बल्कि दुख के साथ यह कहना पड़ता है कि शासन एवं प्रशासन के चिंता से कुछ लोग ऐसे भी प्रभावित हुए जो इस्लामी दावत की ओर अपना संबंध जोड़ते हैं,यह लोग मुसलमानों को अनेक खण्डों में बांट देने वाले पंथों के अनुयायियों में से हैं,समुदायों एवं समूहों को असतित्व में लाने वाले यह पंथ इस्लाम ही की ओर संबंधित करते हैं।इस्लामी दावत से संबंध रखने वाले उन लोगों ने समान जंता के समर्थन और उनके मतदान प्राप्त करने के लिए प्रारंभ में तो अल्लाह तआ़ला के अवतरित शरीअ़त(धर्म)के अनुसार शासन की बात की।किन्तु जब शासन के निर्माण के लिए उन्हें बहुमत प्राप्त हो गई तो वह लोकतंत्र की दोहाई देने लगे और शरीअ़त पर व्यक्तिगत स्वतंत्रता को आगे रखने की बात करने लगे।उनमें से कुछ लोगों ने ऐसी सांस्कुतिक शासन की स्थापना का प्रयास किया जिसमें शरीअ़त(धर्म)को शासन प्रणाली एवं कानून के निर्माण में से एक स्त्रोत का स्थान प्राप्त हो और उसे शासकीय मामलों में पूर्ण रूप से प्रभुत्व प्राप्त न हो,केवल मीरास के कानून एवं निकाह व तलाक व खोला जैसे परिवारिक एवं असैनिक मामलों तक ही धर्म का हस्तक्षेप हो।जब उनसे अल्लाह तआ़ला के अवतरित धर्म को जीवन के समस्त विभागों में लागू करने की मांग की गई तो उन्हों ने इससे मूंह मोड़ा और उसकी ओर कोई ध्यान नहीं दिया।हम अल्लाह की सहायता से वंचित होने और उसके अवतरित धर्म के प्रति बदनीयति का शिकार होने से अल्लाह का शरण मांगते हैं।

इस संक्षिप्त पुस्तिका में उन कुरानी आयतों पर आलोक डाला गया है जो अल्लाह तआ़ला के अवतरित शरीअ़त के प्रशासन के अनिवार्यता पर साक्ष्य हैं।यह कुल साठ आयतें हैं।यदि अल्लाह के नाजिल किए हुए धर्म को न्यायाधीश मानने की अनिवार्यता पर प्रमाण होने वाली केवल एक आयत कुरान में मौजूद होती तब भी प्रयाप्त होती,इस लिए कि मुसलमान को अल्लाह तआ़ला के किसी आदेश का पालन कराने के लिए पवित्र कुरान की केवल एक आयत पर्याप्त है,किंतु यहां तो अल्लाह तआ़ला ने कुरान में इस्लामी शरीअ़त(धर्म)के शासन की अनिवार्यता पर प्रमाणित

साठ आयतें नाजिल करदी हैं और उन आयतों तक मुसलमानों की पहुंच को आसान कर दिया है।धर्म के मूलभूत सिद्धांत से मूंह फेरने वालों के विरूद्ध यह कितना बड़ा तर्क है।क़यामत के दिन कितना नामुराद होगा वह व्यक्ति जिसके विरूद्ध कुरान का तर्क स्थापित होजाएगी।

यहां तक यह बात उल्लेखनीय है कि मेंने अपनी इस पुस्तक में''शासन''की शब्दावली का भी समीक्षा किया है जिसकी दोहाई कुछ लोग इस प्रकार देते हैं कि उसे तौहीद(एकेश्वरवाद)का चौथा प्रकार बताते हैं जबकि वास्तव में यह तौहीदे रोबूबियत की आवश्यकताओं में से है,अर्थात शरीअ़त(धर्म)के शासन को माने बिना तौहींदे रोबूबियत का आस्था अधूरा होगा और तौहीदे रोबूबियत पर ईमान लाने वाला शरीअ़त के शासन को स्वीकारने वाला कहलाएगा,इस लिए कि तकवीनी आदेश एवं धार्मिक आदेश सब का अधिकार अल्लाह तआ़ला ही के पास है। जब धर्म के अनुसार निर्णय धार्मिक आदेश में शामिल है तो फिर धर्म का शासन तौहीदे रोबूबियत में आंशिक रूप से शामिल है किन्तु इसका एक अलग प्रकार नहीं है।

शरीअ़त(धर्म)के अनुसार शासन एवं निर्णय व्यवहारिक अनुप्रयोग के मामला में दो समूह गुमराह होगए,एक समुह ने उस पर अ़मल नहीं किया और उससे मूंह फेरते हुए पश्चिम एवं पूरब में प्रचलित नियम एवं कानून के अनुसार शासन किया,उसी श्रेणी से वे लोग भी हैं जो लोकतांत्रिक एवं सांस्कृतिक शासन स्थापित करने की बात करते हैं।

दूसरे समूह ने इस मामले में अतिवाद का मार्ग अपनाते हुए धर्म के शासन की अनिवार्यता को एकेश्वरवाद के पहले से सिद्ध तीन प्रकारों के पश्चात एक चौथा नया प्रकार बना दिया।

इस मामले में अहले सुन्नत ने मध्य मार्ग अपनाते हुए राजनीति व निर्णय,व्यक्तिगत कानून अर्थात निकाह व तलाक व खोला एवं विरासत आदि जीवन के समस्त पहलुओं में कुरान एवं सून्नत से सिद्ध आदेशों को लागू किया एवं अल्लाह तआ़ला के इस कथन को पूरा किया:

(ومن أحسن من الله حكما لقوم يوقنون)

(अल्लाह तआ़ला से अच्छा निर्णय और आदेश करने वाला कौन हो सकता है?)

وصلى الله على نبينا محمد، وعلى آله وصحبه وسلَّم تسليما كثيرا.

लेखक: माजिद बिन सोलेमान अर्रसी

२२/मोहर्रम १४४०हिजरी

अल्लाह तआ़ला ही एकेला शासक है

1.﴿ألا له الخلق **والأمر**﴾[1]

(याद रखो अल्लाह ही के लिए विशेष है रचनाकार होना एवं शासक होना)शैख अ़ब्दुर्रह़मान सादी रह़िमहुल्लाहु कहते हैं:

"الخلق "अर्थात रचना में अल्लाह तआ़ला के तकवीनी एवं तक़दीरी आदेश शामिल हैं एवं "والأمر "में अल्लाह के धार्मिक व शरई आदेशों के साथ आखिरत में घटने वाले बदला एवं दण्ड से संबंधित आदेश शामिल हैं।

2.﴿إِنَّ هَٰذَا الْقُرْآنَ يَهْدِي لِلَّتِي هِيَ أَقْوَمُ وَيُبَشِّرُ الْمُؤْمِنِينَ الَّذِينَ يَعْمَلُونَ الصَّالِحَاتِ أَنَّ لَهُمْ أَجْرًا كَبِيرًا﴾

निसंदेह यह कुरान वह मार्ग दिखाता है जो अति ही सीधा है और ईमान वालों को जो पुण्य के कार्य करते हैं इस बात का शुभ संदेश देता है कि उनके लिए बहुत बड़ा बदला है)शैख अ़ब्दुर्रह़मान सादी रह़ीमहुल्लाहु कहते हैं:

अल्लाह तआ़ला इस आयत में कुरान की महानता एवं प्रतिष्ठा के प्रति सूचना दे रहा है कि यह बिल्कुल सीधे मार्ग की ओर मार्गदर्शन करने वाली पुस्तक है,अतःजो व्यक्ति कुरान के न्योता पर लब्बैक कहते हुए उसके बताए हुए मार्ग पर चल पड़ा वह जीवन के समस्त गतिविधियों में सबसे अधिक पूर्ण,सबसे अधिक सीधे मार्ग पर चलने वाला और सबसे अधिक हिदायत पाया हुआ व्यक्ति है।

3- ﴿الْيَوْمَ أَكْمَلْتُ لَكُمْ دِينَكُمْ وَأَتْمَمْتُ عَلَيْكُمْ نِعْمَتِي وَرَضِيتُ لَكُمُ الْإِسْلَامَ دِينًا﴾

(आज मेंने तुम्हारे लिए धर्म को पूरा कर दिया और तुम पर अपना उपहार भरपूर कर दिया और तुम्हारे लिए इस्लाम के धर्म होने से प्रसन्न होगया)।इस आयत का मतलब यह है कि आज मेंने अपनी सहायता एवं समर्थन और धर्म के संपूर्णता के माध्यम से इस्लाम धर्म को पूरा कर दिया और तुम्हारे लिए अपने आशीर्वादों को इस प्रकार पूरा कर दिया कि तुम्हें अनभिज्ञता के अंधकार से निकाल कर ईमान के आलोक के सामने लाखड़ा किया और तुम्हारे लिए इस्लाम को धर्म के रूप में स्वीकार कर लिया,अतःतुम सब इस धर्म को अपनालो और उसके दामन को हाथ से छूटने न दो।

[1]सूरह अलआ़राफः54

4- ﴿وَرَبُّكَ يَخْلُقُ مَا يَشَاءُ **وَيَخْتَارُ مَا كَانَ لَهُمُ الْخِيَرَةُ** سُبْحَانَ اللَّهِ وَتَعَالَىٰ عَمَّا يُشْرِكُون﴾.

(और आपका रब जो चाहता है पैदा करता है और जिसको चाहता है उसका चयन कर लेता है,उनमें से किसी को कोई अधिकार नहीं,वह हर उस चीज से श्रेष्ठतर है जिसे लोग अपना साझा बनाते हैं)

शैख अ़ब्दुर्रह़मान सादी रह़ीमहुल्लाहु कहते हैं:ये आयतें इस सामान अर्थ पर साक्ष्य हैं कि समस्त मख़लूक़ अल्लाह तआ़ला का ही रचना है,समस्त संसार पर अल्लाह ही की मर्ज़ी चलती है और व्यक्तियों व आदेशों एवं जमानों व स्थानों में से कुछ भी चयन करने का अधिकार केवल अकेला अल्लाह के पास है।संसार में किसी को भी आदेश देने अथवा किसी वस्तु का चयन करने का अधिकार नहीं है।लोग जो कुछ भी साझा करते हैं उससे अल्लाह की हस्ती पवित्र है,उसका कोई भी साझी,समर्थक एवं सहायक नहीं है और न उसका कोई संतान एवं पत्नी है जैसा कि बहुदेववादियों ने अल्लाह की ज़ात में उन सब चीज़ों को साझी बना रखा है।

5- ﴿ولا يُشرِك في حكمه أحدا ﴾

(अल्लाह तआ़ला अपने आदेश में किसी को साझी नहीं करता)

6. ﴿إِنِ **الْحُكْمُ إِلَّا لِلَّهِ** أَمَرَ أَلَّا تَعْبُدُوا إِلَّاإِيَّاهُ ذَٰلِكَ الدِّينُ الْقَيِّمُ وَلَٰكِنَّ أَكْثَرَ النَّاسِ لَا يَعْلَمُون﴾

(आदेश केवल अल्लाह तआ़ला के लिए है,उसका कथन है कि तुम सब उसके अतिरिक्त किसी और की पूजा न करो,यही सत्य धर्म है किन्तु अधिकतर लोग नहीं जानते)

7.याक़ूब अलैहिस्सलाम ने अपने पुत्रों से कहा था:

﴿إِنِ **الْحُكْمُ إِلَّا لِلَّهِ** عَلَيْهِ تَوَكَّلْتُ وَعَلَيْهِ فَلْيَتَوَكَّلِ الْمُتَوَكِّلُون﴾

(आदेश केवल अल्लाह ही का चलता है,मेरा पूरा विश्वास उसी पर है और प्रत्येक विश्वास करने वाले को उसी पर भरोसा करना चाहिए)

8.﴿ إِنِ **الْحُكْمُ إِلَّا لِلَّهِ** يَقُصُّ الْحَقَّ وَهُوَ خَيْرُ الْفَاصِلِين﴾

(अल्लाह तआ़ला के अतिरिक्त किसी का आदेश नहीं है,अल्लाह तआ़ला सत्य बात को बतादेता है और सबसे अच्छा निर्णय करने वाला है।)

9.﴿ **فَالْحُكْمُ لِلَّهِ** الْعَلِيِّ الْكَبِيرِ﴾

(अब तो निर्णय अल्लाह सर्वोत्तम एवं सर्वेष्ठ ही का है)

10-﴿وَهُوَ اللَّهُ لَا إِلَٰهَ إِلَّا هُوَ لَهُ الْحَمْدُ فِي الْأُولَىٰ وَالْآخِرَةِ **وَلَهُ الْحُكْمُ** وَإِلَيْهِ تُرْجَعُونَ﴾

(वही अल्लाह है उसके अतिरिक्त कोई पूजा का पात्र नहीं,दुनिया एवं आखिरत में उसी की प्रशंसा है,उसी के लिए शासन है और उसी के ओर तुम सब लौटाए जाओगे)

11-.﴿وَلَا تَدْعُ مَعَ اللَّهِ إِلَٰهًا آخَرَ لَا إِلَٰهَ إِلَّا هُوَ كُلُّ شَيْءٍ هَالِكٌ إِلَّا وَجْهَهُ **لَهُ الْحُكْمُ** وَإِلَيْهِ تُرْجَعُونَ﴾

(अल्लाह तआ़ला के साथ किसी और परमेश्वर को न पुकारना,अल्लाह तआ़ला के अतिरिक्त कोई और पूजा का पात्र नहीं,प्रत्येक चीज़ नष्ट होने वाली है मगर उसी का मूंह(एवं हस्ती)उसी के लिए शासन है और उसी के ओर लौटाए जाओगे)

इस्लामी शरीअ़त को न्यायाध्यक्ष मानना अनियार्व है

12-.﴿فَلَا وَرَبِّكَ لَا يُؤْمِنُونَ حَتَّىٰ **يُحَكِّمُوكَ** فِيمَا شَجَرَ بَيْنَهُمْ ثُمَّ لَا يَجِدُوا فِي أَنفُسِهِمْ حَرَجًا مِمَّا قَضَيْتَ وَيُسَلِّمُوا تَسْلِيمًا﴾

(अतःक़सम है तेरे रब की!यह मोमिन नहीं हो सकते जब तक कि आपस के समस्त विवादों में आपको न्यायाधीश न मानलें,फिर जो निर्णय आप उनके लिए करदें उनसे अपनके प्रति अपने दिल में किसी प्रकार की तंगी एवं नाराजगी न पाएं एवं आज्ञाकारीता के साथ स्वीकार करें)

शैख अ़ब्दुर्रह़मान सादी रह़िमहुल्लाहु इस आयत की व्याख्या में लिखते हैंःआप सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम की इस निर्णय मानने में धर्म के समस्त मौलिक व अनुभागीय एवं संपूर्ण व आंशिक आदेश शामिल हैं।[2]

[2]अलतौजीह़ व अलबयान लिशजरतिलईमान,पृष्टः39,थोड़ा हैर फैर के साथ

इब्ने तैमिया रह़िमहुल्लाहु कहते हैंःजो व्यक्ति अल्लाह के रसूल सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम की सुन्नत एवं आप की लाई हुई शरीअ़त के सीमा से बाहर निकल गया उसके प्रति अल्लाह तआ़ला ने क़सम खा कर यह बात कही है कवह उस समय तक मोमिन नहीं हो सकता जब तक कवह समस्त प्रकार के सांसरिक एवं दुनयावी विवादों में अल्लाह के रसूल सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम के निर्णय से प्रसन्न न होजाए एवं आपके निर्णय के बारे में उसके दिल में कोई तंगी बाकी न रहे।कुरान में इस मूल के अनेक प्रमाण उपलबध हैं।[3]

इब्ने कसीर रह़िमहुल्लाहु इस आयत की व्याख्या में लिखते हैंःअल्लाह तआ़ला अपनी पवित्र एवं सम्माननीय हस्ती की क़सम खा कर कहता है कि कोई व्यक्ति उस समय तक मोमिन नहीं हो सकता जब तक कवह अल्लाह के रसूल सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम को समस्त मामलों में निर्णायक एवं न्यायाधीश न मान ले।आप सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने जो आदेश दिया है वही सत्य है,आंतरिक एवं **बाह्य** प्रत्येक प्रकार से उस आदेश का प्रलन अनिवार्य है।इसी लिए अल्लाह तआ़ला ने यह कह दिया है कि) ﴿ثم لا يجدوا في أنفسهم حرجاً مما قضيت ويسلموا تسليماً﴾ अर्थात कवह आपको निर्णायक एवं न्यायाध्यक्ष मानलेते हैं तो वह **बाह्य** रूप से ही नहीं बल्कि दिल से आपकी आज्ञा करते हैं और आप के निर्णय के प्रति उनके दिलों में कोई तंगी व नाराजगी का भाव नहीं होता है,आंतरिक एवं **बाह्य** प्रत्येक रूप से आपके आगे समर्पित रहते हैं,न आपके निर्णय को मानने से इंकार करते हैं,न उस पर चर्चा करते हैं और न अपने पक्ष का रक्षा करते हैं।इब्ने कसीर रह़िमहुल्लाहु की बात समाप्त हुई।

इब्ने **क़य्यिम** रह़िमहुल्लाहु इस आयत की व्याख्या में लिखते हैंःअल्लह तआ़ला ने सबसे अधिक प्रिय एवं सम्मानित चीज की क़सम खाई है और वह अल्लाह तआ़ला की हस्ती है। यह क़सम इस वास्तव को बयान करने के लिए खाई गई है कि लोगों का ईमान उस समय तक पूरा नहीं हो सकता है और वे उस समय तक ईमान वाले नहीं हो सकते हैं जब तक कवह समस्त प्रकार के विवादों में अल्लाह के रसूल सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम को अपना निर्णायक एवं न्यायाध्यक न मान लें।विवादित मामलों का अर्थ वे मामले हैं जिनका संबंध धर्म से है और उनको लेके विरोध पैदा होजाते हैं।आयत में शब्द «ما»'मोसूला समान अर्थ का उल्लेख बयान करने के लिए है,इससे ईमान का खण्डन होता है जबकि अल्लाह के नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम को समस्त विवादित मामलों में निर्णायक मान न लिया जाए।

अल्लाह तआ़ला ने इसी पर बस नहीं किया बलकि उस में यह भी शामिल कर दिया कि मोमिन के लिए अल्लाह के रसूल के आदेश पर दिल की सहमती होना अनिवार्य है।रसूल का आदेश

[3]मजमूअलफतावा(28/471)

सामने आजाने के पश्चात लोग अपने दिलों में उसके प्रति तंगी का भाव न रखें, बल्कि उसे पूरे खूले दिल के साथ हाथों हाथ लें और उसके सामने अपना सर झुका दें,उसे मोटे मन के साथ स्वीकार करने वाला भाव न हो और न उसे हलके में लिया जाए,इस लिए कि यह ईमान के विरोध है,अतःसत्य मोमिन होने के लिए यह अनिवार्य है कि रसूल के आदेश को खूश दिली एवं खूले दिल के साथ प्रसन्ता के साथ स्वीकार किया जाए।

> रसूल के आदेश को स्वीकार करने के विषय में बंदा अगर अपने आंतरिक भावना एवं अनुभति की समीक्षा करना चाहता है तो उसे अपनी स्थिति पर विचार करना चाहिए और अपनी मरजी एवं छोटे बड़े मामलों में अपने पूर्वजों के परंपरा के विरुद्ध रसूल का आदेश सामने आने के बाद उसे अपने दिल की भावना का अध्ययन करना चाहिए:
>
> بل الإنسان على نفسه بصيرة * ولو ألقى معاذيره.

(बल्कि मनुष्य स्वयं अपने उपर आप ही तर्क है अगरचे कितने ही बहाने **प्रस्तुत** करे)

सुबहानल्लाह,बहुत से लोगों के दिलों में बहुत से ग्रंथों के प्रति कितना दरद एवं कष्ट का भावना पैदा होता है और उनकी यह चाहत होती है कि काश इस प्रकार का कोई ग्रंथ नाजिल ही न हुआ होता,इस प्रकार के ग्रंथों से उनके दिल में भी दरद उठता है और कुछ ग्रंथों के कारण से उनके गले में भी टीस उठती है।एक दिन उनकी यह आंतरिक स्थिति व कष्ट स्पष्ट होजाएगी और जिस दिन भेदों की जांच पड़ताल होगी उस दिन उनके लिए यह सब रुसवाई का कारण होगा।

अल्लाह तआ़ला ने इसी पर बस नहीं किया बल्कि इसकी पुष्टि के रूप में आगेويسلموا تسليماकी भी वृद्धी किया है।आयत के इस भाग में अल्लाह तआ़ला ने इस क्रिया को उसके कार्यकारी मसदर के माध्यम से स्वीकारात्मक प्रयोग किया है,इसलिये एक ही वाक्य में एक क्रिया का ज़ोर के रूप में प्रयोग हुआ है और आयत के इस स्वीकारात्मक भाग का संदेश यही है कि रसूल के सामने पूरी आज्ञाकारिता एवं समर्पण का भाव होना चाहिए इस प्रकार से कि बंदा इस आदेश के सामने आज्ञाकारिता एवं समर्पण का मूरत बन जाए।अल्लाह के इस आदेश को मानने में ज़ोर जबरदस्ती न हो जैसे पीड़ित व्यक्ति तानाशाह एवं अत्याचारी के सामने ना चाहते हुए छुक जाता है,बल्कि मोमिन बंदा रसूल के आदेश को अपने मालिक एवं स्वामी का आदेश मान कर उसके समक्ष झुक जाता है,क्योंकि वह इसके पास प्रत्येक चीज से अधिक प्रियहै।और झुकने वाला जानता है कि उसकी सफलता एवं सौभाग्य मालिक व स्वामी के आदेश के सामने झुक जाने ही में है।वह यह भी जानता है कि उसका स्वामी उसके प्राण से भी अधिक उसकी प्राथमिक्ता का

पात्र है,उससे अधिक कृपा करने वाला है,उसका स्र्वाधिक शुभचिंतक,उसके कलयाण से स्र्वाधिक अवगत और स्र्वाधिक उसको लाभ पहुंचाने वाला है।

बंदा को जब भी रसूल सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम की ज़ात के संबंध से इन वास्तविक्ताओं का ज्ञान होजाता है वह आपके आदेशों के समक्ष झुक जाता है,स्वयं को समर्पण कर देता है,उसके दिल का कन कन आज्ञाकारिता के भाव से भर जाता है और वह समझ लेता है कि इस प्रकार के समर्पण व प्रसन्ता के बिना किसी प्रकार की शुभकामना एवं सफलता को प्राप्त करना असंभव है।[4]

इस संबंध में इब्ने **क़य्यिम** रहीमहुल्लहु का एक उत्तम कथन उनकी पुस्तक''अलसवाइक अलमुरसला''में भी है,वह कहते हैंःअल्लाह तआ़ला ने अपनी पवित्र हस्ती की क़सम खा कर यह बात कही है कि लोग उस समय तक मोमिन नहीं हो सकते हैं जब तक कि अपने समस्त विवादित मामलों में अल्लाह के रसूल को अपना न्यायाधीश न मान लें और केवल न्यायाध्यक्ष मानना ही ईमान की प्राप्ती के लिए प्रयाप्त नहीं है बल्कि इसके लिए यह भी अनिवार्य है कि रसूल जो निर्णय करदें उस पर दिलों में किसी प्रकार की कोई तंगी का भाव न हो और लोग रसूल के आदेश के सामने संपूर्ण रूप से स्वयं को समर्पित करदे।अल्लाह का कथन है:

﴿فلا وربك لا يؤمنون حتى يحكموك فيما شجر بينهم ثم لا يجدوا في أنفسهم حرجا مما قضيت ويسلموا تسليما﴾

इस आयत में अल्लाह तआ़ला ने अपने कथन को कई प्रकार के ओजपूर्ण कथनों के माध्यम से अवधारित किया है:

प्रथम ओजपूर्ण कथनःजिस बात के उपर क़सम खाई गई है उसे नकारात्मक अक्षर से प्रारंभ किया गया है,इसमें जिस वस्तु की क़सम खाई गई है उसकी बलपूर्वक इंकार भी शामिल है।नकारात्मक वाक्य में यह ओजपूर्ण कथन वैसे ही है जैसे सकरात्मक वाक्य में«إن»के माध्यम से ओजपूर्ण कथन होता है।

द्वितीय ओजपूर्ण कथनःअल्लाह तआ़ला ने अपनी हस्ती की क़सम खाई है।

तृतीय ओजपूर्ण कथनःजिस वस्तु की क़सम खाई गई है उसके प्रति किया का ऐसा सेगा़ प्रयोग किया गया है जो होदूस(होने)पर साक्ष है,अर्थात ईमान का कोई भाग अथवा उसका कोई रूप उनके अंदर उस समय तक नहीं पाई जासकता जब तक कवह आप सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम को न्यायाधीश न मान लें।

[4]अर्रेसाला अलतबूकियाःपृष्टः80.83

चौथा ओजपूर्ण कथनः **उद्देश्य** के रूप में«حتى»के बजाए «إلا»का प्रयोग किया गया है जो,उसके माध्यम से यह बताने का **उद्देश्य** है कि नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम को न्यायाधीश मानने के बाद ही ईमान का अस्तित्व होगा, «حتى»के प्रति यह नियम है कि उसके बाद उसके पूर्व में प्रवेश होता है।

पांचवा ओजपूर्ण कथनः المحَـــكّم فيه (जिस विषय में निर्णायक बनाया जाता है)के लिए सिला वाले संज्ञा के सेगे़ का प्रयोग किया गया है जो समान अर्थ पर साक्ष है,अर्थात अल्लाह तआ़ला का यह कथनःفيما شـــجر بينهم अर्थात छोटे बड़े समस्त विवादित मामलों में अल्लाह के रसूल सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम को निर्णायक मानें।

छटा ओजपूर्ण कथनःइसमें"الحرج "के इंकार को भी शामिल कर दिया गया है अर्थात आप सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम के निर्णाय से अपने दिलों में किसी भी प्रकार की कोई तंगी का भाव न रखना।

सतवां ओजपूर्ण कथनः"الحرج "को नकारात्मक के साथ लाया गया है,इसका मतलब यह है कि यह लोग रसूल के निर्णय से अपने दिलों में किसी प्रकार की कोई तंगी का भाव न रखें।

आठवां ओजपूर्ण कथनःआप सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम के दिए हुए निर्णय को ओमूम(समान)के सेगे़ के साथ उल्लेख किया गया है,अर्थात"من ما قضيت "में"ما "या तो मसदरिया है,इसमें आपके दिए हुए समस्त निर्णय शामिल होंगे,अथवा फिर"ما "मोसूला है,अर्थात कवह व्यक्ति जिसके प्रति आपने कोई निर्णय दिया,उसमें कवह व्यक्ति शामिल होगा जिसके प्रति आपका कोई निर्णय आया।

नोंवा ओजपूर्ण कथनःइसी के साथ इसमें"التسـليم "की भी वृद्धि की गई है जो नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम को न्यायाधीश मानने और आपके निर्णय से दिल में तंगी न रखने से अधिक एक चीज है,क्योंकि आपको न्यायाध्यक्ष मानने वाला व्यक्ति जरूरी नहीं कि आपके निर्णय से दिल में तंगी का भाव न रखे,और आपके निर्णय से दिल में तंगी का भाव न रखने वाला व्यक्ति जरूरी नहीं कि इस निर्णय के सामने स्वयं को समर्पित करने वाला हो,इस लिए "التســليم "में यह शामिल है कवह आपके आदेश से संपूर्ण रूप से प्रसन्न एवं संतुष्ट हो और आदेश मानने पर तैयार हो।

दसवा ओजपूर्ण कथनः"التسليم "के क्रिया को मसदर के माध्यम से बल दिया गया है।[5]

13-﴿إِنَّمَا كَانَ قَوْلَ الْمُؤْمِنِينَ إِذَا دُعُوا إِلَى اللَّهِ وَرَسُولِهِ **لِيَحْكُمَ** بَيْنَهُمْ أَن يَقُولُوا **سَمِعْنَا وَأَطَعْنَا**وَأُولَٰئِكَ هُمُ الْمُفْلِحُون ﴾

(ईमान वालों का कथन तो यह है कि जब उन्हें इस लिए बोलाया जाता है कि अल्लाह और उसका रसूल उनमें निर्णय करदे तो वे कहते हैं कि हमने सुना और मान लिया,यही लोग सफल होने वाले हैं)

शैख अब्देर्रहमान बिन सादी रहिमहुल्लाहु कहते हैंःउन मोमिनों की यह बात सत्य पर आधारित है जिन्होंने अपने ईमान की पुष्टि अपने कार्य से करदी,उन्हें जब निर्णय के लिए अल्लाह और उसके रसूल की ओर बोलाया जाता है,चाहे वह निर्णय उनकी इच्छा के अनुसार हो अथवा विरुद्ध,वह कहते हैंः"**سَمِعْنَا وَأَطَعْنَا**"अर्थात हमने अल्लाह और उसके रसूल के आदेश को सुन लिया,जिसने हमें उसकी दावत दी हमने उसकी दावत को स्वीकारा,हमने किसी प्रकार की तंगी के बिना पूर्ण रूप से आज्ञाकारी की।उसके पश्चात कहा"وَأُولَٰئِكَ هُمُ الْمُفْلِحُون"अर्थात ऐसे ही लोगों के लिए सफलता को विशेष कर दिया,**उद्देशित** सफलता को पालेने की सफलता एवं नापसंदीदा चीज से मुक्ति पाने का नाम है।और सफलता तो केवल उसी के भाग में है जिसने अल्लाह और उसके रसूल को निर्णायक मान लिया और अल्लाह व रसूल की आज्ञाकारिता का **पट्टा** अपनी गरदन में डाल लिया।

14- ﴿إِنَّا أَنزَلْنَا إِلَيْكَ الْكِتَابَ بِالْحَقِّ **لِتَحْكُمَ بَيْنَ النَّاسِ بِمَا أَرَاكَ اللَّهُ** وَلَا تَكُن للخَائِنِينَ خَصِيما﴾

(निसंदेह हमने तुम्हारी ओर सत्य के साथ अपनी पुस्तक नाजिल फरमाई है ताकि तुम लोगों में उस चीज के अनुसार निर्णय करो जिससे अल्लाह ने तुमको अवगत किया है और खेयानत करने वाले का समर्थक न बनो)

15- ﴿وَمَن لم **يَحْكُم بِمَا أَنزَلَ اللَّهُ** فَأُولَٰئِكَ هُمُ الكافرون﴾

(जो लोग अल्लाह की उतारी हुई **वह्य** के साथ निर्णय न करें वह)पूरे एवं ठोस(काफिर हैं)

[5]अलसवाइक़ अलमुरसला अ़ला अलजहमिया व अलमोअ़त्तला(1220.1221)

16. وَمَن لم **يَحْكُم بِمَا أَنزَلَ اللَّهُ** فَأُولَٰئِكَ هُمُ الظَّالِمُون **(**और जो लोग अल्लाह के नाज़िल किए हुए के अनुसार आदेश न करें,वही लोग क्रूर हैं**)**

17. ﴿وَمَن لم **يَحْكُم بِمَا أَنزَلَ اللَّهُ** فَأُولَٰئِكَ هُمُ الفاسقون﴾ **(**और जो लोग अल्लाह के नाजिल किए हुए के अनुसार आदेश न करें वे(बूरे)फासिक़ हैं**)**

18.अल्लाह तआ़लाने अपने नबी(सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम)से कहाः

"**فَاحْكُم بَيْنَهُم بِمَا أَنزَلَ اللَّه** ولا تتبع أَهْوَاءَهُمْ عما جاءك من الحق"

(इस लिए आप उनके आपस के मामलों में उसी अल्लाह की उतारी हुई पुस्तक के साथ आदेश कीजिए,इस सत्य से हटके उनकी इच्छा के पीछे न जाएं**)**

19." وَأَنِ **احْكُم بَيْنَهُم بِمَا أَنزَلَ اللَّهُ** وَلَا تَتَّبِعْ **أَهْوَاءَهُمْ** وَاحْذَرْهُمْ أَن **يَفْتِنُوكَ عَن بَعْضِ** مَا أَنزَلَ اللَّهُ إِلَيْك "

(आप उनके मामलों में अल्लाह के नाज़िल की हुई **वह्य** के अनुसार ही आदेश निर्णय किया कीजिए,उनकी इच्छाओं के पीछे न जाइए और उनसे होशयार रहिए कि कहीं यह आपको अल्लाह के उतारे हुए किसी आदेश से इधर उधर न करदें**)**

20." وما اخْتَلَفْتُمْ فِيهِ مِن شَـــيْءٍ **فَحُكْمُهُ إِلَى اللَّهِ** ذَٰلِكُمُ اللَّهُ رَبِّي عَلَيْهِ تَوَكَّلْتُ وَإِلَيْهِ أُنِيب **(**और जिस जिस चीज में तुम्हारा विवाद हो उसका निर्णय अल्लाह तआ़ला की ओर है,यही अल्लाह मेरा रब है जिस पर मेंने विश्वास किया है और जिसकी ओर में झुकता हूं**)**

21.﴿ إِنَّ اللَّهَ **يَحْكُمُ** مَا يُرِيد﴾ **(**निसंदेह अल्लाह जो चाहे आदेश करता है**)**

22. ﴿ **وَاللَّهُ يَحْكُمُ لَا مُعَقِّبَ لِحُكْمِهِ** وَهُوَ سَرِيعُ الْحِسَاب﴾ **(**अल्लाह आदेश करता है कोई उसके आदेशों को पीछे डालने वाला नहीं,वह जलदी हिसाब लेने वाला है**)**

23. ﴿ذَٰلِكُمْ **حُكْمُ اللَّهِ يَحْكُمُ** بَيْنَكُمْ وَاللَّهُ عَلِيمٌ **حَكِيم** ﴾ **(**यह अल्लाह का निर्णय है जो तुम्हारे मध्य कर रहा है,अल्लाह तआ़ला बड़ा ज्ञान(एवं)नीति वाला है**)**

24- ﴿ثُمَّ **جَعَلْنَاكَ عَلَىٰ شَرِيعَةٍ مِّنَ الْأَمْرِ فَاتَّبِعْهَا** وَلَا تَتَّبِعْ أَهْوَاءَ الَّذِينَ لَا يَعْلَمُون * إِنَّهُمْ لَن يُغْنُوا عَنكَ مِنَ اللَّهِ شَيْئًا وَإِنَّ الظَّالِمِينَ بَعْضُهُمْ أَوْلِيَاءُ بَعْضٍ وَاللَّهُ وَلِيُّ الْمُتَّقِين﴾

(फिर हमने आपको धर्म के(स्पष्ट)मार्ग पर सिथिर कर दिया अतःआप उसी पर लगे रहें और अज्ञानियों की इच्छा का अनुगमन में न पड़ें।(याद रखें)कि यह लोग बिल्कुल भी अल्लाह के सामने आपके कुछ काम नहीं आसकते(समझलें कि)क्रूर लोग आपस में एक दूसरे के मित्र होते हैं और अल्लाह मुत्तक़ियों(ईश्वर भक्तों)का मित्र है)

25.﴿وَكَذَٰلِكَ أَنزَلْنَاهُ **حُكْمًا** عَرَبِيًّا ﴾ (इसी प्रकार हमने इस क़ुरान को अ़रबी भाषा का फरमान उतारा है)

26.أَفَغَيْرَ اللَّهِ أَبْتَغِي **حَكَمًا** وَهُوَ الَّذِي أَنزَلَ إِلَيْكُمُ الْكِتَابَ مُفَصَّلًا (तो क्या अल्लाह के अतिरिक्त किसी और निर्णय करने वाले को तलाश करूं जबकि वह ऐसा है कि उसने एक संपूर्ण पुस्तक तुम्हारे पास भेज दिया है)

अह़काम और निर्णय के लिए इस्लाम के अतिरिक्त धर्म की ओर जाना अल्लाह तआ़ला की विशेषताओं में किसी अन्य को साझा करना है

27. أَمْ لَهُمْ **شُرَكَاءُ** شَرَعُوا لَهُم مِّنَ الدِّينِ **مَا لَمْ يَأْذَن بِهِ اللَّهُ** وَلَوْلَا كَلِمَةُ الْفَصْلِ لَقُضِيَ بَيْنَهُمْ وَإِنَّ الظَّالِمِينَ لَهُمْ عَذَابٌ أَلِيم (क्या उन लोगों ने ऐसे (अल्लाह के)साझी(बना रखे)हैं जिन्होंने धर्म के ऐसे आदेश निश्चित कर दिए हैं जो अल्लाह के फरमाए हुए नहीं हैं।यदि निर्णय के दिन का प्रामर्श न होता तो(अभी ही)उन में निर्णय कर दिया जाता,निसंदेह उन निर्दयियों के लिए ही भ्यावक यातना है)

समस्त पैगंबरों ने उन ही धर्मों के अनुसार निर्णय किया जो अल्लाह ने उन पर नाजिल किया था

28. لِكُلٍّ جَعَلْنَا مِنكُمْ **شِرْعَةً وَمِنْهَاجًا** (तुम में से प्रत्येक के लिए हमने एक क़ानून एवं मार्ग निश्चित कर दिया है)

29. **شَرَعَ لَكُم مِّنَ الدِّينِ** مَا وَصَّىٰ بِهِ نُوحًا وَالَّذِي أَوْحَيْنَا إِلَيْكَ وَمَا وَصَّيْنَا بِهِ إِبْرَاهِيمَ وَمُوسَىٰ وَعِيسَىٰ أَنْ أَقِيمُوا الدِّينَ وَلَا تَتَفَرَّقُوا فِيهِ كَبُرَ عَلَى الْمُشْرِكِينَ مَا تَدْعُوهُمْ إِلَيْهِ اللَّهُ يَجْتَبِي إِلَيْهِ مَن يَشَاءُ وَيَهْدِي إِلَيْهِ مَن يُنِيب(अल्लाह तआ़ला ने तुम्हारे लिए वही धर्म तय कर दिया है जिसको स्थापित करने का उसने नूह(अलैहिस्सलाम)को आदेश दिया था और जो(**वह्य** के माध्यम से)हमने तेरी ओर भेज दिया है और जिसका बलपूर्वक आदेश हमने इब्राहीम और मूसा और ईसा(अलैहिमस्सलाम)को दिया था कि उस धर्म को स्थापित रखना और उसमें फूट न डालना,जिस चीज की ओर आप उन्हें बोला रहे हैं वह तो(उन)बहुदेववादियों के लिए कष्टदायक है,अल्लाह तआ़ला जिसे चाहता है अपना चहेता बनाता है और जो भी उसकी ओर जाए वह उसको हिदायत देता है)

30- يَا دَاوُودُ إِنَّا جَعَلْنَاكَ خَلِيفَةً فِي الْأَرْضِ **فَاحْكُم بَيْنَ النَّاسِ بِالْحَقِّ** وَلَا تَتَّبِعِ الْهَوَىٰ فَيُضِلَّكَ عَن سَبِيلِ اللَّهِ إِنَّ الَّذِينَ يَضِلُّونَ عَن سَبِيلِ اللَّهِ لَهُمْ عَذَابٌ شَدِيدٌ بِمَا نَسُوا يَوْمَ الْحِسَاب

(ए दाऊद!हमने तुम्हें धर्ती में उत्राधिकारी बना दिया,तुम लोगों के मध्य सत्य के साथ निर्णय करो और अपनी इच्छा का अनुगमन न करो वरना वह तुम्हें अल्लाह के मार्ग से भटका देगा,निसंदेह जो लोग अल्लाह के मार्ग से भटक जाते हैं उनके लिए कठोर यातना है इस लिए कि उन्होंने हिसाब के दिन को भूला दिया है)

अल्लाह तआ़ला सबसे अच्छा निर्णय करने वाला और सब शासकों का शासक है,उसके निर्णय से अच्छा किसी का निर्णय नहीं है

31.وَإِن كَانَ طَائِفَةٌ مِّنكُمْ آمَنُوا بِالَّذِي أُرْسِلْتُ بِهِ وَطَائِفَةٌ لَّمْ يُؤْمِنُوا فَاصْبِرُوا حَتَّىٰ يَحْكُمَ اللَّهُ بَيْنَنَا وَهُوَ خَيْرُ الْحَاكِمِين] (और यदि तुम में से कुछ लोग आदेश पर जिसको दे कर मुझे भेजा गया ईमान लाए हैं और कुछ ईमान नहीं लाए हैं तो थोड़ा ठहर जाआ!यहां तक कि हमारे मध्य अल्लाह निर्णय किए देता है और वे सब निर्णय करने वालों से अच्छा है)

32.وَاتَّبِعْ مَا يُوحَى إِلَيْكَ وَاصْبِرْ حَتَّىٰ يَحْكُمَ اللَّهُ وَهُوَ **خَيْرُ الْحَاكِمِين** (और आप उसका अनुगमन करते रहें जो कुछ आप के पास **वह्य** भेजी जाती है और धैर्य रखिए यहां तक कि अल्लाह निर्णय करदे और वह सब निर्णय करने वालों से अच्छा है)

33. وَهُو خَيْرُ **الْحَاكِمِين** (और वह सब निर्णय करने वालों में अच्छा है)

34. وَنَادَىٰ نُوحٌ رَّبَّهُ فَقَالَ رَبِّ إِنَّ ابْنِي مِنْ أَهْلِي وَإِنَّ وَعْدَكَ الْحَقُّ وَأَنتَ **أَحْكَمُ الْحَاكِمِينَ** (नूह अलैहिस्सलाम ने अपने रब को पुकारा और कहा कि मेरे रब!मेरा बेटा तो मेरे घर वालों में से है,निसंदेह तेरा प्रामर्श बिल्कुल सत्य है और तू समस्त शासकों से अच्छा शासक है)

35. ﴿ أَلَيْسَ اللَّهُ **بِأَحْكَمِ الْحَاكِمِينَ**﴾ (क्या अल्लाह समस्त शासकों से अच्छा शासक नहीं है)

36. أَفَحُكْمَ الْجَاهِلِيَّةِ يَبْغُونَ **وَمَنْ أَحْسَنُ مِنَ اللَّهِ حُكْمًا** لِّقَوْمٍ يُوقِنُونَ (क्या ये लोग फिर से अज्ञानता का निर्णय चाहते हैं,विश्वास रखने वाले लोगों के लिए अल्लाह तआ़ला से अच्छा निर्णय और आदेश करने वाला कौन हो सकता है?)

अल्लाह तआ़ला के नाज़िल किए हुए धार्मिक आदेशों पर धैर्य रखना अनिवार्य है

37. وَاصْبِرْ **لِحُكْمِ رَبِّكَ** فَإِنَّكَ بِأَعْيُنِنَا وَسَبِّحْ بِحَمْدِ رَبِّكَ حِينَ تَقُومُ (तू अपने रब के आदेश के प्रतीक्षा में धैर्य से काम ले,निसंदेह तू हमारी आंखों के सामने है,प्रभात में जब तू उठे तो अपने रब की पवित्रता बयान कर)

38. فَاصْبِرْ **لِحُكْمِ رَبِّكَ** وَلَا تَكُن كَصَاحِبِ الْحُوتِ إِذْ نَادَىٰ وَهُوَ مَكْظُومٌ (अतःतू अपने रब के आदेश का धैर्य के साथ प्रतीक्षा(कर)और मच्छली वाले के जैसा न होजा जबकि उसने ग़म की स्थिति में दुआ की)

39.﴿فَاصْبِرْ **لِحُكْمِ رَبِّكَ** وَلَا تُطِعْ مِنْهُمْ آثِمًا أَوْ كَفُورًا﴾

(अतःतू अपने रब के आदेश पर सिथिर रह और उनमें से किसी पापी अथवा नाशुक्रे(अकृतज्ञ)का कहना न मान)

इस्लाम धर्म को निर्णायक एवं न्यायाध्यक्ष मानने से मूंह मोड़ना पाखण्डियोंका गुण है

40. وَإِذَا دُعُوا إِلَى اللَّهِ وَرَسُولِهِ **لِيَحْكُمَ** بَيْنَهُمْ إِذَا فَرِيقٌ مِّنْهُم **مُّعْرِضُونَ** (जब यह इस बात की ओर बोलाए जाते हैं कि अल्लाह और उसके रसूल उनके झगड़े चुका दे तो भी उनका एक समूह मूंह मोड़ने वाला बन जाता है)

41-﴿أَلَمْ تَرَ إِلَى الَّذِينَ أُوتُوا نَصِـــيبًا مِّنَ الْكِتَابِ يُدْعَوْنَ إِلَىٰ كِتَابِ اللَّهِ **لِيَحْكُمَ** بَيْنَهُمْ ثُمَّ يَتَوَلَّىٰ فَرِيقٌ مِّنْهُمْ وَهُم **مُّعْرِضُون** ﴾.

(क्या आपने उन्हें नहीं देखा जिन्हें एक भाग पुस्तक का दिया गया है वह अपने आपस के निर्णयों के लिए अल्लाह तआ़ला की पुस्तक की ओर बोलाए जाते हैं,फिर भी उनका एक दल मूंह फैर के लौट जाता है)

42.أَلَمْ تَرَ إِلَى الَّذِينَ يَزْعُمُونَ أَنَّهُمْ آمَنُوا بِمَا أُنزِلَ إِلَيْكَ وَمَا أُنزِلَ مِن قَبْلِكَ يُرِيدُونَ أَن **يَتَحَاكَمُوا إِلَى الطَّاغُوتِ** وَقَدْ أُمِرُوا أَن يَكْفُرُوا بِهِ وَيُرِيدُ الشَّـيْطَانُ أَن يُضِـلَّهُمْ ضَـلَالًا بَعِيدًا(क्या आपने उन्हें नहीं देखा?जिनका दावा तो यह है कि जो कुछ आप पर और जो कुछ आपसे पूर्व उतारा गया है उस पर ईमान है,किंतु वह अपने निर्णय अल्लाह के अतिरिक्त की ओर लेजान चाहते हैं जबकि उन्हें आदेश दिया गया है कि शैतान का इंकार करें,शैतान तो यह चाहता है कि उन्हें दिगभर्मित कर दूर डाल दे)

आखिरत में केवल अल्लाह तआ़ला ही का शासन होगा

43. **فَاللَّهُ يَحْكُمُ** بَيْنَهُمْ يَوْمَ الْقِيَامَةِ فِيمَا كَانُوا فِيهِ يَخْتَلِفُون(क़यामत के दिन अल्लाह उनके विवाद का निर्णय उनके मध्य करदेगा)

44. **فَاللَّهُ يَحْكُمُ** بَيْنَكُمْ يَوْمَ الْقِيَامَة (अल्लाह तआ़लल क़यामत के दिन तुम्हारे मध्य निर्णय करदेगा)

45.यहूद के प्रति अल्लाह तआ़ला का कथन है: وَإِنَّ **رَبَّكَ لَيَحْكُمُ** بَيْنَهُمْ يَوْمَ الْقِيَامَةِ فِيمَا كَانُوا فِيهِ يَخْتَلِفُون(बात यह है कि आपका रब स्वयं ही उनमें उनके विवाद का निर्णय क़यामत के दिन करदेगा)

46. **اللَّهُ يَحْكُمُ** بَيْنَكُمْ يَوْمَ الْقِيَامَةِ فِيمَا كُنتُمْ فِيهِ تَخْتَلِفُون(निसंदेह तुम सबके विवाद का निर्णय क़यामत वाले दिन अल्लाह तआ़ला स्वयं करेगा)

47. ثُمَّ إِلَيَّ مَرْجِعُكُمْ **فَأَحْكُمُ** بَيْنَكُمْ فِيمَا كُنتُمْ فِيهِ تَخْتَلِفُون(फिर तुम सब का लौटना मेरे ही ओर है,में ही तुम्हारे आपस के समस्त विवादों का निर्णय करदूंगा)

48- ﴿الْمُلْكُ يَوْمَئِذٍ **لله يحكم** بَيْنَهُمْ فَالَّذِينَ آمَنُوا وَعَمِلُوا الصَّالِحَاتِ فِي جَنَّاتِ النَّعِيمِ ﴾

(उस दिन केवल अल्लाह ही का शासन होगा,वही उनमें निर्णय करेगा,ईमान एवं पुण्य के कार्य वाले तो आशीर्वादों से भरे स्वर्ग में होंगे)

49. إِنَّ **اللَّهَ يَحْكُمُ** بَيْنَهُمْ فِي مَا هُمْ فِيهِ يَخْتَلِفُونَ إِنَّ اللَّهَ لَا يَهْدِي مَنْ هُوَ كَاذِبٌ كَفَّارٌ यह लोग जिस विषय में विवाद कर रहे है उसका(सत्य)निर्णय अल्लाह(स्वयं)करेगा,झूटे एवं नाशुक्रे(लोगो)को अल्लाह तआ़ला मार्ग नहीं दिखाता)

50.إِنَّ رَبَّكَ يَقْضِي بَيْنَهُم **بِحُكْمِهِ**وَهُوَ الْعَزِيزُ الْعَلِيمُ (आपका रब उनके मध्य अपने आदेश से निर्णय करदेगा,वह बड़ा ही प्रभावी एवं ज्ञानी है)

51.قُلِ اللَّهُمَّ فَاطِرَ السَّمَاوَاتِ وَالْأَرْضِ عَالِمَ الْغَيْبِ وَالشَّهَادَةِ **أَنتَ تَحْكُمُ** بَيْنَ عِبَادِكَ فِي مَا كَانُوا فِيهِ يَخْتَلِفُونَ (आप कह दीजिए कि ए अल्लाह!आकाशों एवं पृथ्वियों के पैदा करने वाले,छुपे खुले के जानने वाले,तू ही अपने बंदों में इन मामलों में निर्णय करेगा जिनमें वह उलझे रहे थे)

52. قَالَ رَبِّ **احْكُم بِالْحَقِّ** وَرَبُّنَا الرَّحْمَٰنُ الْمُسْتَعَانُ عَلَىٰ مَا تَصِفُونَ(स्वयं नबी ने कहा ए रब!न्याय के साथ निर्णय फरमा और हमारा रब कृपा करने वाला है जिससे सहायता मांगी जाती है उन बातों पर जो तुम बयान करते हो)

53.قَالَ الَّذِينَ اسْتَكْبَرُوا إِنَّا كُلٌّ فِيهَا إِنَّ **اللَّهَ قَدْ حَكَمَ** بَيْنَ الْعِبَادِ (वह बड़े लोग उत्तर देंगे हम तो सभी उस आग में हैं,अल्लाह तआ़ला अपने बंदों के मध्य निर्णय कर चूका है)

54.ثُمَّ رُدُّوا إِلَى اللَّهِ مَوْلَاهُمُ الْحَقِّ أَلَا **لَهُ الْحُكْمُ** وَهُوَ أَسْرَعُ الْحَاسِبِينَ (फिर सब अपने सत्य मालिक के पास लाए जाएंगे,अच्छे से सुन लो निर्णय अल्लाह ही का होगा और वह बहुत जलदी हिसाब लेगा)

अल्लाह के आदेश के विरुद्ध मानवीय निर्णय निंदनीय है

55.يَتَوَارَىٰ مِنَ الْقَوْمِ مِن سُوءِ مَا بُشِّرَ بِهِ أَيُمْسِكُهُ عَلَىٰ هُونٍ أَمْ يَدُسُّهُ فِي التُّرَابِ أَلَا **سَاءَ مَا يَحْكُمُونَ** (इस बुरी सूचना के कारण से लोगों से छिपा फिरता है,सोचता है कि क्या उसको निरादर के साथ लिए हुए ही रहे अथवा उसे **मिट्टी** में दबा दे,आह!क्या ही बुरे निर्णय करते हैं)

56.أَمْ حَسِبَ الَّذِينَ يَعْمَلُونَ السَّيِّئَاتِ أَن يَسْبِقُونَا **سَاءَ مَا يَحْكُمُون** (क्या जो लोग पाप कर रहे हैं उन्होंने यह समझ रखा है कि वे हमारी पहुंच से बाहर होजाएंगे,यह लोग कैसा बुरा प्रस्ताव कर रहे हैं)

57.أَمْ حَسِبَ الَّذِينَ اجْتَرَحُوا السَّيِّئَاتِ أَن نَّجْعَلَهُمْ كَالَّذِينَ آمَنُوا وَعَمِلُوا الصَّالِحَاتِ سَوَاءً مَّحْيَاهُمْ وَمَمَاتُهُمْ **سَاءَ مَا يَحْكُمُون** (क्या उन लोगों का जो पाप के कार्य करते हैं यह सोचते हैं कि हम उन्हें उन लोगों जैसा करदेंगे जो ईमान लाए और पुण्य के कार्य किए कि उनका मरना जीना एक जैसा होजाए,बुरा है वह निर्णय जो वे कर रहे है)

58. **أَفَحُكْمَ** الْجَاهِلِيَّةِ **يَبْغُونَ** وَمَنْ أَحْسَنُ مِنَ اللَّهِ حُكْمًا لِقَوْمٍ يُوقِنُون (क्या यह लोग फिर से अज्ञानता का निर्णय चाहते हैं,विश्वास रखने वाले लोगों के लिए अल्लाह तआ़ला से अच्छा निर्णय और आदेश करने वाला कौन हो सकता)

59. قُلْ هَلْ مِن شُرَكَائِكُم مَّن يَهْدِي إِلَى الْحَقِّ قُلِ اللَّهُ يَهْدِي لِلْحَقِّ أَفَمَن يَهْدِي إِلَى الْحَقِّ أَحَقُّ أَن يُتَّبَعَ أَمَّن لَّا يَهِدِّي إِلَّا أَن يُهْدَىٰ **فَمَا لَكُمْ كَيْفَ تَحْكُمُون** (आप कह दीजिए कि तुम्हारे साझियों में कोई ऐसा है कि सत्य का मार्ग बताता हो?आप कह दीजिए कि अल्लाह ही सत्य का मार्ग बताता है तो फिर जो व्यक्ति सत्य का मार्ग बताता हो वह अधिक अनुगमन का पात्र है अथवा वह व्यक्ति जिस को बिना बताए स्वयं ही मार्ग न सूझे?अतःतुम को क्या होगया है,तुम कैसे निर्णय करते हो?)

60.**فَمَا لَكُمْ كَيْفَ تَحْكُمُون**[6](तुम्हें क्या हो गया,तुम कैसे निर्णय कर रहे हो?)

इस्लामी शरीअ़त को निर्णायक न मानने का दंड आखेरत की यातना है

61-وَلَوْ تَرَىٰ إِذْ وُقِفُوا عَلَىٰ رَبِّهِمْ قَالَ أَلَيْسَ هَٰذَا بِالْحَقِّ قَالُوا بَلَىٰ وَرَبِّنَا قَالَ **فَذُوقُوا الْعَذَابَ بِمَا كُنتُمْ تَكْفُرُون**

(और यदि आप उस समय देखें जब यह अपने रब के सामने खड़े किए जाएंगे।अल्लाह फरमाएगा कि क्या यह मामला सत्य नहीं है?वह कहेंगे निसंदेह क़सम अपने रब की।अल्लाह तआ़ला फरमाएगा तो अब अपने कुफ़्र के बदले यातना पाओ)

[6]यह आयत कुरान में दो स्थान पर आयी है,एक सूरह **अलसाफ्फात**:154,द्वितीय सूरह अलक़लम:36

وَيَوْمَ يُعْرَضُ الَّذِينَ كَفَرُوا عَلَى النَّارِ أَلَيْسَ هَٰذَا بِالْحَقِّ قَالُوا بَلَىٰ وَرَبِّنَا قَالَ **فَذُوقُوا الْعَذَابَ بِمَا كُنتُمْ تَكْفُرُونَ**.62

(वे लोग जिन्होंने कुफ्र किया जिस दिन नरक के सामने लाए जाएंगे(और उनसे कहा जाएगा कि)क्या यह सत्य नहीं है?तो उत्तर देंगे कि हां क़सम है हमारे रब की(सत्य है) (अल्लाह)फरमाएगा अब अपने कुर्फ के बदले यातना का मजा चखो)

जीवन के समस्त विभागों में अल्लाह के नाजिल की हुई शारीअ़त को निर्णायक बनाने की अनिवार्यता से संबंधित शैख़ सालेह़ फौज़ान अलफौज़ान के निर्देश

शैख़ सालेह़ बिन फौज़ान अलफौज़ान ह़फेज़हुल्लाहु अपनी पुस्तक «إعانة المستفيد بشرح كتاب التوحيد» (2/228)में लिखते हैंःअल्लाह तआ़ला के नाज़िल की हुई शरीअ़त(धर्म)को निर्णायक एवं न्यायाध्यक्ष मानना तौह़ीद (एकेश्वरवरद)के आस्था में शामिल है और इस्लामी शरीअ़त के अतिरिक्त किसी और क़ानून एवं प्रणाली को निर्णायक बनालेना और उसके अनुसार जीवन बिताना और जीवन के मामलों को तय करना शिर्क(बहुदेववाद) के प्रकार में से हैं,इस लिए कि कलमा तौह़ीद(لا إله إلا الله)का अर्थ और तक़ाज़ा यह है कि अल्लाह की पुस्तक और उसके रसूल सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम की सुन्नत को निर्णायक व न्यायाधीश मान लिया जाए और उसी के अनुसार जीवन गुजार दी जाए।

जिसने अल्लाह की पुस्तक एवं रसूल सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम की सुन्नत को छोड़ कर किसी चीज को निर्णायक बनाया और उसके अनुसार जीवन गुजारा तो उसने कलमाए तौह़ीद को कम जाना और कलमा(لا إله إلا الله)के तकाजे को पूरा नहीं किया।

शैख सालेह़ अलफौज़ान अपनी पुस्तक के पृष्ठ 119 पर लिखते हैंः

आज लोग दावत के तरीके,शैली और जमातों के मार्ग एवं तरीके की बात करते हैं,इन तरीकों के निश्चेय के विषय में भी अल्लाह की पुस्तक और रसूल सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम की सुन्नत को असल स्त्रोत एवं निर्णायक बनाना अनिवार्य है।आज व्यक्तियों व दलों के अपनाए हुए दावती व प्रशिक्षण तरीकों में से जो कुरान व ह़दीस के अनुकूल होगा वही सही है,उसे अपनाना अनिवार्य है।हम किसी दल अथवा समुह अथवा दावती तरीके के लिए पक्षपात का प्रदशन नहीं करते हैं,हम इस राय को अल्लाह की पुस्तक एवं रसूल सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम की सुन्नत के

विरुद्ध मानते हैं और इन स्वनिर्मित तरीकों के दावत देने वाले और दलों के लिए पक्षपात का प्रदर्शन करने वालों को गुमराही की ओर दावत देने वाला समझते हैं।

जो व्यक्ति कुरान व ह़दीस को निर्णायक बनाने को धार्मिक न्यायालयों तक सीमित करता है वह गलत पर है,इस लिए कि कुरान व ह़दीस को न्यायाध्यक्ष बनाने का मतलब यह है कि इन को समस्त कार्यों एवं मामलों,प्रत्येक प्रकार के विवाद एवं विरोध,आर्थिक अधिकार,मुजतहिदों एवं फक़ीहों(विधिवेत्ता)के कथन,दावत के तरीके एवं शैली एवं संगठनों के अपनाए हुए तेरीके सब में निर्णायक एवं न्यायाध्यक्ष माना जाए,इस लिए अल्लाह तआ़ला का कथन है:وَمَا اخْتَلَفْتُمْ فِيهِ مِنْ شَيْءٍ (और जिस चीज में तुम्हारा विवाद हो)यहां इस आयत में"شَيْءٍ "जातिवाचक शर्त के प्रसंग में प्रयोग हुआ है,इस में मनुष्यों का प्रत्येक प्रकार का विवाद शामिल है,चाहे वे आपसी विवाद हों अथवा सांप्रदायिक विवाद हों अथवा तौर तरीके में विवाद हो।हमें धर्म के इस महत्वपूर्ण बिंदु को स्वेद के लिए समझ लेना चाहिए,इस लिए कि कुछ आम लोग और दावत से संबंध रखने वाले कुछ लोग यह समझते हैं कि कुरान व ह़दीस को निर्णायक बनाना और उसके अनुसार निर्णय करना अनिवार्य है।हम कहते हैं कि हां,न्यायालयों में धार्मिक आदेशों के अनुसार निर्णय करना अनिवार्य है,किंतु इस सीमा को केवल धार्मिक न्यायालयों तक सीमित रखना सही नहीं है,इससे आगे बढ़ कर अन्य मामलों में भी धर्म के अनुसार निर्णय करना अनिवार्य है,प्रत्येक प्रकार के विवादित मामलों को धार्मिक आदेशों के अनुसार सुलझाना अनिवार्य है,चाहे यह देशों के विवादित मामले हों अथवा संगठनों के आपसी विवाद हों अथवा व्यक्तियों के आपसी विवाद हों,अथवा पंथों एवं विचारों के आपसी विवाद हों,इन समस्त विवादित मामलों में कुरान व सुन्नत ही को निर्णायक बनाना धार्मिक आदेशों के अनुसार इन समस्त सम्सयाओं का समाधान करना अनिवार्य है।हमारी मांग यही है कि इन समस्त कार्यों एवं मामलों में धर्म को निर्णायक एवं न्यायाध्यक्ष स्वीकारा जाए।

रही यह स्थिति कि हम धर्म के निर्णायक होने को जीवन के एक भाग तक सीमित करदें और दूसरे भाग के प्रति खामोशी अपनाएं और हम यह कहें कि लोगों को अन्य मामलों में उनकी चाहतों के अनुसार कार्य करने दिया जाए,प्रत्येक व्यक्ति को यह स्वतंत्रा दे दी जाए कि वह अपने लिए एक पंथ व मार्ग अपना ले।हमारे दृश्य में यह बहुत बड़ी कमी है,इस लिए कि न्यायिक मामले,फिक़्ही पंथ के विवाद एवं दावती तरीके व शैली हर मामले में धर्म के आदेशों के अनुगमन और धर्म को निर्णायक मानना हमारे ऊपर अनिवार्य है,एक सच्चे पक्के मोमिन के लिए यही सत्य मार्गदर्शन है और धर्म पर अ़मल करने का यही तरीका है।हमारे लिए यह वैध नहीं कि हम अल्लाह तआ़ला के कथन और उसके रसूल के कथन को जीवन के किसी एक भाग तक सीमित करदें और जीवन के अन्य कार्यों में धर्म के आदेशों पर अ़मल करने से स्वतंत्र होजाएं।इस व्यवहार को या तो अज्ञानता कहा जाएगा या फिर इसे मनमर्जी का नाम दिया जाएगा।

आज अनेक से लोग न्यायालयों में धर्म को लागु करने की बात करते हैं,यह ठीक है किंतु दूसरी ओर वही लोग धार्मिक तरीकों एवं पंथों के विषय में एक दूसरे से विवाद रखते हैं,वह इन मामलों में धर्म को निर्णायक मान कर लागू करने से बचते हैं,वे कहते हैं कि इस मामले में लोगों को उनके हाल पे छोड़ दिया जाए,उनके आस्था,उनकी शब्दावली और उनके तरीके के बारे में कुछ न कहा जाए,उन चीजों के संबंध से उन्हें उनके हाल पर रहने दिया जाए।यह गुमराही,यह कुरान के कुछ भागों पर ईमान लाना एवं कुछ भागों का इंकार करने के जैसा है जैसा कि अल्लाह का कथन है:

﴿أَفَتُؤْمِنُونَ بِبَعْضِ الْكِتَابِ وَتَكْفُرُونَ بِبَعْضٍ فَمَا جَزَاءُ مَنْ يَفْعَلُ ذَلِكَ مِنْكُمْ إِلَّا خِزْيٌ فِي الْحَيَاةِ الدُّنْيَا وَيَوْمَ الْقِيَامَةِ يُرَدُّونَ إِلَى أَشَدِّ الْعَذَابِ﴾

(क्या कुछ आदेशों पर ईमान रखते हो और कुछ के साथ कुफ्र करते हो?तुम में से जो भी ऐसा करे उसका दंड इसके अतिरिक्त क्या हो कि दुनिया में अवमान और क़यामत के दिन कठोर यातना की मार झेले)

यह ऐसा मामला है कि इस से अवगत रहना आवश्यक है।यह एक महान धार्मिक मामला है जिस्से अधिकतर अज्ञात हैं।जो लोग धर्म को न्यायाध्यक्ष मान कर लागु करने की दोहाई देते फिरते हैं उनकी चाहत यह होती है कि केवल परिवारिक विवादों,धन व साधन से संबंधित आपसी विवादों एवं सांसारिक मामलों तक ही धर्म के लागू करने को सीमित करदें और आस्था व पंथ के अध्याय में धार्मिक आदेशों से बचें या इस अध्याय में धर्म की ओर न लौटें।

शैख सालेह़ अलफौज़ान अपनी इसी पुस्तक के पृष्ट 135 पर लिखते हैं:

आज धर्म के शासन की बात करने वाले जो कुछ कह रहे हैं और धर्म को निर्णायक मानने को केवल न्यायिक कार्यों तक ही सीमित करदे रहे हैं और आस्था के अध्याय में धर्म को शासक स्वीकार नहीं करते न उसे लागु करते हैं वह इस प्रकार की बात कहते हैं:लोग अपने आस्था के मामले में स्वतंत्र हैं,कोई अगर यह कहता है कि में मुसलमान हूं तो यह कहना ही उसके लिए प्रयाप्त है,चाहे वह राफजी हो,जहमी हो,मोतज़ली हो अथवा किसी और पंथ से उसका संबंध हो,हम कुछ सहमत मामलों में एक हैं और जिन मामलों में हमारा एक दूसरे से भिन्नता है उनमें हम एक दूसरे को माजूर समझते हैं।यह नियम व कानून उन लोगों ने बनाया है और वह इसे स्वर्ण नियम व सिधांत मानते हैं,यह वास्तव में कुछ मामलों में अल्लाह की पुस्तक को निर्णायक मानना है और इससे अधिक महत्वपूर्ण मामलों में अल्लाह की पुस्तक को भुला देना है,आस्था के अध्याय में धर्म को निर्णायक मानना आपस के विवादित मामलों में उसको न्यायाध्यक्ष मानने एवं लागू करने से अधिक महत्वपूर्ण एवं आवश्यक है।जो व्यक्ति धर्म के शासन के केवल एक भाग

को लेता है और आस्था,पंथ एवं तरीकों के मामला में धर्म के शासन को भुला देता है जबकि इन आस्थाओं एवं सांप्रदायिक विवादों ने इस समय मुसलमानों की एकता को भंग कर रखा है और जो व्यक्ति फिकही(धर्मशास्त्र) मामलों में विवाद को भुलाते हुए कहता है कि समस्त फकीहों(धर्मशास्त्रियों)के कथन एक समान हैं,हम उनके प्रमाणों पर विचार किए बिना इनमें से किसी एक कथन पर अ़मल करते हैं,उसका यह कथन असत्य है,इस लिए कि जो कथन सत्य एवं ठोस साक्ष्य से प्रमानित हो जाए उस पर अ़मल करना अनिवार्य है।प्रत्येक प्रकार के विवाद में अल्लाह की पुस्तक को निर्णायक मानना अनिवार्य है चाहे वे विवाद आस्था से संबंधित हों अथवा पंथ से अथवा फिक़ह(धर्मशास्त्र)से,कुरान की आयत के टुकड़ेفَإِنْ تَنَازَعْتُمْ فِي شَيْءٍ(किसी भी चीज में तुम्हारा विवाद हो जाए)में प्रत्येक प्रकार के विवाद की बात कही गई है।द्वितीय आयत मेंوَمَا اخْتَلَفْتُمْ فِيهِ مِنْ شَـــيْءٍ فَحُكْمُهُ إِلَى الله، (और जिस चीज में तुम्हारा विवाद हो उसका निर्णय अल्लाह तआ़ला ही की ओर है)भी समान है,इस में भी प्रत्येक प्रकार के विवाद को अल्लाह के आदेश के अनुसार समाप्त करने की बात कही गई है।

ये लोग गलती पर हैं जिन्हों ने हाकमीयत को तौह़ीद(एकेश्वरवाद)का बदल बना दिया,क्योंकि इन लोगों ने एक पहलू को लिया और उससे अधिक महत्वपूर्ण पहलू को छोड़ दिया,अर्थात आस्था को,इन लोगों ने पंथ के विषय में धर्म के मार्गदर्शन को भी छोड़ दिया जो या तो ह़ाकमीयम के समान है अथवा उससे अधिक महत्वपूर्ण है,इसी पंथ के विविधता के कारण लोग दलों एवं समुहों में बंट गए हैं,प्रत्येक दल का एक अलग पंथ एवं मार्ग है।हम पंथ के विषय में भी कुरान व ह़दीस की ओर क्यों नहीं जाते हैं?हम उस पंथ एवं मार्ग को क्यों नहीं अपनाते हैं जो कुरान व ह़दीस से अनुकूल हो?और उस पर क्यों नहीं चलते हैं?

वार्तालाप का सार यह है कि समस्त मामलों में कुरान व ह़दीस को निर्णायक मानना अनिवार्य है।कुछ चीजों में धर्म को निर्णायक बनाना और कुछ चीजों में न्यायाध्यक्ष न बनाना सही नहीं है।जो व्यक्ति समस्त मामलों में शरीअ़त के निर्णय को स्वीकार नहीं करता है वह शरीअ़त के कुछ भागों पर अ़मल करने वाला एवं कुछ भागों का इंकार करने वाला है,चाहे वह उसे माने यह न माने।

कुरान की इस आयत में इसी व्यवहार का चयन किया गया हैأَفَتُؤْمِنُونَ بِبَعْضِ الْكِتَابِ وَتَكْفُرُونَ بِبَعْض

(क्या कुछ आदेशों पर ईमान रखते हो और कुछ का इंकार करते हो?)

शैख सालेह अलफौज़ान ह़फिजहुल्लाहु की बात समाप्त हुई जिसको हमने थोड़े संक्षिप्त के साथ उल्लेख किया है।

शैख मोह़म्मद बिन ओ़सैमीन रह़ीमहुल्लाहु कहते हैंः

‘‘कुछ लोगों ने तौह़ीद(एकंश्वरवाद)के एक नए प्रकार को उसके मूल प्रकारों में शामिल कर दिया है और उसे तौह़ीदे ह़ाकमियत का नाम दिया है।तौह़ीद का यह प्रकार असत्य है,इस लिए कि यह एक नया अविष्कार है।सलफे सालेहीन(धार्मिक पूर्वजों)ने तौह़ीद के जो प्रकार बयान किए हैं उनमें इसका उल्लेख नहीं मिलता है।यदि यह सही होता तो हम कहते कि शब्दावली निर्माण में प्रतियोगिता की कोई बात नहीं है,किंतु यहां मामला यह है कि तौह़ीद का एक नया प्रकार बनाना सही नहीं है,इस लिए तौह़ीदे ह़ाकमियत तौह़ीदे रोबूबियत में इस प्रकार शामिल है कि आदेश एवं शासन केवल अल्लाह तआ़ला के लिए है तथा यह तौह़ीदे ह़ाकमीयत तौह़ीदे **ओलूह़िय्यत** में इस प्रकार शामिल है कि बंदा को प्रत्येक रूप से अल्लाह की **ओलूह़िय्यत** का पाबंद बनाया गया है और इसके बिना उसकी बंदगी विश्वसनीय नहीं है।इसके कारण तौह़ीदे हाकमीयत को एक प्रकार बनाने की आवश्यकता नहीं है,इस लिए कि इसे एक नया प्रकार बनाने के रूप में कई चीजों में शरीअ़त का विरोध अनिवार्य होगा,उदाहरण स्वरूप शासकों को काफिर घोषित करने में जलदी करना।तावील(विवेचन)की गुंजाइश के पात्र किसी एक भी मामले में भी यदि शासक का अ़मल शरीअ़त के विरुद्ध होगा तो लोग कह देंगे कि यह काफिर है इस लिए कि इसने तौह़ीद को पूरे तौर पर स्वीकार नहीं किया,इसी लिए कुछ लोगों ने तौह़ीद का चौथा प्रकार अविष्कार किया है।[7]

इन पंक्तियों के नक़ल करने वाले का कहना है(अल्लाह उसे क्षमा प्रदान करे) :

इस्लामी देशों पर साम्राज्यवादी शत्कियों के प्रभुत्व से पूर्व उम्मत शरीअ़त के अतिरिक्त किसी और चीज को निर्णायक एवं न्यायाध्यक्ष नहीं मानती थी,औपनिवेशिक प्रभुत्व से पूर्व मुसलिम उम्मत के जीवन में केवल शरीअ़त ही को स्त्रोत एवं मूल क स्थान प्राप्त था।जब धर्मयोद्धाओं का इस्लामी देशों से निकलना हुआ तो वे लोग अपने पीछे अपने हानिकारक प्रभाव छोड़ कर गए।उनके अवशेष में सबसे अधिक घातक उनके पंथ व मार्ग एवं वे शासक हैं जो ग़ैर इस्लामी नियमों के माध्यम से शासन चलाते हैं ताकि धर्म लोगों के जीवन से दूर ही रहे,किंतु इस अंधकार सिथिति का आशाजनक पहलू यह है कि सत्य व निष्ठावान विद्वान इस सिथिति से अवगत हो गए और उन्हों ने आम जनता के सामने इस अधार्मिक मार्ग एवं पंथ के खतरों को स्पष्ट किया और अल्लाह तआ़ला के नाज़िल किए हुए धर्म को निर्णायक व न्यायाधीश मानने की अनिवार्यता पर पुस्तकें लिखीं।उन अनमोल लेखों में से कुछ यह हैंः

1 تحكيم القوانين، محمد بن إبراهيم آل الشيخ

[7]शरहुलकाफिया अलशाफिया(3/35/)प्रकाशकःमोअस्सतुल शैख मोह़म्मद बिन ओ़सेमीन अलखैरीया

लेखकःमोह़म्मद बिन इब्राहीम आले शैख

.2 وجوب تحكيم شريعة الله، عبد العزيز بن عبد الله بن باز

लेखकःअ़ब्दुलअ़ज़ीज़ बिन अ़ब्दुल्लाह बिन बाज़

3- وجوب التحاكم إلى ما أنزل الله وتحريم التحاكم إلى غيره، صالح بن فوزان الفوزان

लेखकःसालेह़ बिन फौज़ान अलफौज़ान

.4 وجوب تطبيق الشريعة في كل عصر، صالح بن غانم السدلان

लेखकः सालेह़ बिन ग़ानिम अस्सदलान

.5 حكم الجاهلية، أحمد بن محمد شاكر

लेखकःअह़मद बिन मोह़म्मद शाकिर

.6 الكتاب والسنة يجب أن يكونا مصدر القوانين، أحمد بن محمد شاكر

लेखकःअह़मद बिन मोह़म्मद शाकिर

.7 تحذير أهل الأيمان عن الحكم بغير ما أنزل الرحمن، إسماعيل بن إبراهيم الخطيب

लेखकःइब्माईल बिन इब्राहीम अलख़तीब

.8 أثر تطبيق الشريعة الإسلامية في حل المشكلات الاجتماعية، إبراهيم بن مبارك الجوير

लेखकःइब्राहीम बिन मोबारक अलजैहरी

.9 الشريعة الإلهية لا القوانين الجاهلية، عمر بن سليمان الأشقر

लेखकः उ़मर बिन सोलेमान अलअशकर

.10 العدل في شريعة الإسلام وليس في الديموقراطية المزعومة، عبد المحسن بن حمد العباد البدر

लेखकः अ़ब्दुलमोह़सिन बिन ह़म्द अलएबाद अलबदर

.11 أسس الحكم في الشريعة الإسلامية (الشورى – العدل – المساواة)، صالح بن غانم السدلان

लेखकः सालेह़ बिन ग़ानिम अस्सदलान

समाप्त

अल्हमदोलिल्लाह पुस्तक पूरी हुई और सत्य स्पष्ट होगया।अल्लाह का कथन है:" قُلْ جَاءَ الْحَقُّ وَمَا يُبْدِئُ الْبَاطِلُ وَمَا يُعِيد "(कह दीजिए!कि मेरा रब सत्य(सत्य **वह्य**)नाज़िल फरमाता है,वह हर ग़ैब का जानने वाला है।कह दीजिए! कि सत्य आचूका,असत्य न तो पूर्व में कुछ कर सका है और न कर सकेगा)

शैख अ़ब्दुर्रह़मान बिन सादी रह़ीमहुल्लाहु इस आयत की व्याख्या में लिखते हैं:"قُلْ جَاءَ الْحَقُّ "अर्थात सत्य स्पष्ट होगया,सत्य सूर्य के जैसा आलोक बीखेरने लगा,उसका प्रभुत्व एवं शासन आखों के सामने आगया।

" وَمَا يُبْدِئُ الْبَاطِلُ وَمَا يُعِيد"अर्थात असत्य का सूर्य लुप्त होगया,इसका असत्य होना स्पष्ट होगया,उसका प्रभुत्व एवं शासन समाप्त होगया,न वह पूर्व में कुछ कर सका और न पश्चात में उसके करने के लिए कुछ बचा है।शैख अ़ब्दुर्रह़मान की बात समाप्त हुई।

अल्लाह तआ़ला के कृपा एवं आशीर्वाद के प्रति में उस दयालु एवं कृपालु हस्ती के समक्ष प्रार्थना करता हूं कि वह उत्पीड़नों से मुसलमानों को सुरक्षित रखे,विशेष रूप से पथभ्रष्ट करने वाले अधिनायकों एवं शासकों के उत्पीड़नों से जो लोगों को ज्ञान के बिना पथभ्रष्ट करते हैं,क्योंकि एक विद्वान की ग़लती का मतलब संसार की गंलती है,अल्लाह तआ़ला मुसलमानों को पापों एवं उत्पीड़नों से सुरक्षित रखे,उन्हें जीवन के समस्त भागों में अल्लाह की पुस्तक एवं रसूल सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम की सुन्नत को निर्णायक एवं न्यायाध्यक्ष स्वीकार करने की तौफीक़(शक्ति)प्रदान करे,उन्हें दोनों **वह्य** के दामन को बलपूर्वक थमने वाला बनाए और मुद्रास्फीति एवं अपस्फीति के बिना धर्म के इन दोनों साफ सोतों से सैराब होने वाला बनाए।

وصلى الله على نبينا محمد، وعلى آله وصحبه وسلَّم تسليما كثيرا.

लेखक:

माजिद बिन सोलेमान अर्रसी

एक सफर,१४४०हिजरी

००९६६५०५९०६७६१